राष्ट्रीय जल नीति 2012 : पानी का अधिकार ख़तरे में

वर्ष 2012 की शुरुआत में भारत सरकार ने राष्ट्रीय जलनीति का खाका वेबसाईट पर पेश कर उस पर जनता से प्रतिक्रिया जाननी चाही थी। इस नीति पर देश में काफी बहस हुई और इसके संभावित परिणामों के संबंध में गंभीर चिंताए व्यक्त की गई।

देश की पहली जल नीति 1987 में बनाई गई थी। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम चलाया गया था जिसके तहत क्षेत्र सुधार यानी सेवाओं के निजीकरण पर बल दिया गया था। इस ढाँचागत समायोजन कार्यक्रम के तहत तीसरी दुनिया के देशों से अपना राजकोषीय घाटा कम करने की सलाह के साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के संबंध में नीतियाँ बनाने की अपेक्षा की गई थी। इसके बाद कई भारत समेत कई देशों में पहली बार अपनी-अपनी राष्ट्रीय जल नीतियाँ बनाई गई। इस नीति को अप्रैल 2002 में उद्यतन कर नई राष्ट्रीय जलनीति जारी की गई थी जिसमें पहली बार जल संसाधनों के नियोजन, विकास और प्रबंधन में निजी क्षेत्र की भागीदारी का प्रावधान किया गया था।

वर्ष 2012 की राष्ट्रीय जल नीति के प्रारुप में पानी के निजीकरण की नीति को विस्तार दिया गया है। इस प्रारुप में निजीकरण के लिए 'सार्वजनिक निजी भागीदारी' या पीपीपी के जुमले का इस्तेमाल किया गया है यानी काम वही नाम नया। साथ ही जल क्षेत्र में सुधार (निजीकरण) को प्रोत्साहन और सहायता प्रदान किया जाना शामिल किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के एजेण्डे का अनुकरण करते हुए इस नीति में यह भी घोषणा कर दी गई है कि राज्य को 'सेवा प्रदाता' के बजाय नियामक और प्रबंधक की भूमिका निभानी चाहिए। हालांकि नीति में पानी को सामुदायिक संसाधन भी माना गया है लेकिन जोर तो इसे आर्थिक वस्तु मानने पर ही दिया गया है।

अब तक यही माना जाता रहा है कि कानून सबसे महत्वपूर्ण तथा अंतिम होते हैं और इस बात का ध्यान रखा जाता रहा है कि नीतियाँ कानून की मूल भावना की विरोधाभाषी न हो। लेकिन अब जमाना बदल गया है। अब नौकरशाहों द्वारा बनाई जाने वाली नीतियाँ विधानमण्डलों को निर्देशित करती है कि नीतियों के विरोधाभाषी कानून देश में नहीं चलेंगें। हमारे देश में मध्यप्रदेश सिंचाई अधिनियम 1931, उत्तरी भारत नहर एवं जलनिकास अधिनियम 1873 जैसे पानी से संबंधित सदियों पुराने कानून है जिनमें पानी पर राज्य का एकाधिकार माना गया है। कुछ वर्षों पहले तक इन कानूनों को चुनौती देने वाली किसी नीति के बारे में सोचा तक नहीं गया था लेकिन, अब नीतियों के मुताबिक कानून बनाए जा रहे हैं या फिर मौजूदा कानूनों को बदला जा रहा है। सिंचाई प्रबंधन में कृषकों की भागीदारी अधिनियम 1999 ऐसा ही कानून है जो जल नीति के अनुरुप बनाया गया है। इस कानून में 2003 में संशोधन कर सिंचाई क्षेत्र में निजीकरण को शामिल किया गया। केवल इतना ही नहीं, अब अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियाँ स्वयं सरकारों

को निर्देशित करती है कि हमारे देश में कैसे कानून बनें। विश्व बैंक ने मध्यप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना हेतु 39.6 करोड़ डॉलर का कर्ज देते समय यह शर्त रखी थी कि प्रदेश सरकार को 'जल नियामक कानून' बनाना पड़ेगा। प्रदेश सरकार ने इस कानून के प्रति अनेक बार अपनी बचनबद्धता दर्शाई है। इसी प्रकार मध्यप्रदेश शहरी 20 करोड़ डॉलर के मध्यप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार कर्ज के लिए परियोजना शहरों में सार्वजनिक नल खत्म करने, गरीबों को मुफ्त पानी बंद करने और जल दरें बढ़ाने की शर्त रखी थी। इस दिशा में भी सरकार को आगे बढ़ता हम देख रहे हैं।

1 अप्रैल 2002 को राष्ट्रीय जल नीति जारी करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने शानदार भाषण दिया था। उन्होंने इसे राष्ट्रीय स्तर पर जल संसाधन के नियोजित विकास और प्रबंधन के लिए बनाई गइ नीति बताते हुए जल के समुदाय आधारित प्रबंधन की बात कही थी। लेकिन, यह सहभागी प्रबंधन और कुछ नहीं बल्कि जल उपभोक्ता समूहों के गठन के माध्यम से सरकार का अपनी जिम्मेदारी कम करने का प्रयास मात्र था। इसी नीति में परियोजनाएँ बनाने, मालिकी देने, संचालन करने, भाड़े पर देने और जल संसाधन के परिवहन में निजीकरण किए जाने का भी उल्लेख था। अपने भाषण के अंत में श्री वाजपेयी ने कहा था कि यह (जलनीति) एक नए युग की शुरुआत है। श्री वाजपेयी का यह वाक्य सच साबित हुआ और उस जलनीति के कारण अब एक नया युग आ चुका है जिसमें पीपीपी के नाम पर सरकारी धन से निजी कंपनियों को लम्बे समय तक मुनाफा कमाने की छूट दी जाने लगी है।

जल नीति 2012 के प्रारुप की प्रस्तावना में जल संकट का खतरा बताते इसके बेहतर प्रबंधन एवं संरक्षण हेतु निजीकरण की वकालत की गई है। समानता, सामाजिक न्याय, स्थायित्व, पारिस्थितिक आवश्यकता, जीवन का अधिकार, गरीबों की जीविका, खाद्य सुरक्षा, पेयजल की उपलब्धता सुनिश्चित करने जैसे जुमलों के उपयोग के बावजूद पानी को आर्थिक वस्तु मानने पर ही जोर दिया गया है।

नीति में भारतीय भोगाधिकार अधिनियम (Indian Easement Act) 1882 में संशोधन की संभावना व्यक्त की गई है ताकि किसानों द्वारा खुद की भूमि से पानी निकालने पर प्रतिबंध लगाया जा सके। पानी की कमी वाले क्षेत्रों में भूजल स्तर सुधारने के नाम पर अंतरबेसिन अंतरण पर जोर दिया गया है लेकिन इसका फायदा राजनैतिक हैसियत वाले क्षेत्रों और निजी कंपनियों को ही मिलेगा।

जल दरों का निर्धारण परियोजनाओं के प्रशासन, संचालन और संधारण खर्च की पूर्ण लागत वसूली के सिद्धांत पर करने पर बल दिया गया है। लेकिन स्थानीय जलप्रबंधन की अनिवार्यता पर नीति मौन है। इसका प्रभाव यह होगा कि बड़े बजट की योजनाएँ बनाई जाएगी जिनका संचालन खर्च भी अधिक होगा और उसकी लागत न तो सिंचाई का पानी लेने वाले किसान चुका पाएँगें और न हीं पेयजल की दरकार रखने वाले आम नागरिक। इस तरह की बड़े बजट की योजनाएँ बनाने की परिपाटी शुरु हो चुकी है।

खण्डवा में 52 किमी दूर इंदिरा सागर जलाशय से, शिवपुरी में 40 किमी दूर मड़ीखेड़ा बॉंध से, पिपरिया में 18 किमी दूर साण्डिया स्थित नर्मदा से और भोपाल में 70 किमी दूर नर्मदा से पानी लाने की योजनाएँ है। इन सारी योजनाओं का संचालन पीपीपी के माध्यम से ही होना है। इसलिए, इनके संचालन-संधारण खर्च के साथ निजी कंपनी का मुनाफा भी आम आदमी से वसूला जाएगा।

जल के अधिक दोहन का कारण बिजली की सस्ती दरों को बताया गया है। इससे स्पष्ट है कि पानी के संरक्षण के नाम पर अब बिजली की दरों को और बढ़ाया जाएगा। किसानों के लिए सिंचाई और आम आदमी के लिए रोशनी मुश्किल होना तय है।

प्रदूषण रोकने के बजाय प्रदूषक पर जुर्माने की पैरवी की गई है। यह एक प्रकार से उद्योगपतियों को प्रदूषण करने की परोक्ष रुप से दी गई छूट है। क्योंकि उद्योगपति-राजनेता गठजोड़ के कारण उद्योगपतियों से जुर्माना वसूला जाना संभव नहीं होता है। दूरसंचार कंपनी रिलायंस को ग्रामीण क्षेत्र में सेवा न देने के कारण (लायसेंस की शर्तों में यह शामिल था) विभाग ने 650 करोड़ का जुर्माना लगाया था लेकिन विभाग मंत्री श्री कपिल सिब्बल ने जुर्माना घटाकर मात्र 5 करोड़ कर दिया था।

परियोजना प्रभावितों को दिए जाने वाले मुआवजे का कुछ हिस्सा लाभांवित परिवारों से वसूलने की बात कही गई है। लेकिन, सरकार इतनी हिम्मत दिखा पाए यह संभव नहीं है। मध्यप्रदेश में 1986 से एक कानून बना है जिसके अनुसार परियोजना प्रभावितों के पुनर्वास हेतु लाभांवित किसानों की जमीन का कुछ हिस्सा अर्जित करने का प्रावधान है। लेकिन इसे लागू नहीं किया जा सका है। सरकार का तर्क था कि इस कानू को लागू करने से लाभांवित परिवार ही परियोजना का विरोध करने लगेंगें।

शहरी जलप्रदाय व्यवस्था सतही जल से करने का करने को बेहतर बताया गया है। इसका प्रभाव यह होगा कि वर्तमान सतही जल संरचनाओं से ही जलप्रदाय योजनाएँ बनाने को न्यायोचित ठहराया जाएगा तथा स्थानीय संसाधनों की उपेक्षा की जाएगी। खेती के लिए बने जलाशयों का अन्य कार्यों के लिए दोहन होने से समुदायों में विवाद बढ़ेंगें।

2002 की जल नीति में राज्यों से भी अपनी-अपनी जलनीतियाँ अगले 2 वर्षों में तैयार करने की अपेक्षा की गई थी। इसी के तहत 17 सितंबर 2003 को मध्यप्रदेश ने अपनी जलनीति घोषित की। यह नीति भी योजनाओं की लागत वसूली और निजीकरण का समर्थन करने वाली ही है।

जल नीति का संशोधित प्रारुप

जून 2012 में जल संसाधन मंत्रालय की वेबसाईट पर संशोधित जल नीति का प्रारुप रखा गया है। इसमें कुछ बदलाव स्वागतयोग्य हैं लेकिन फिर भी बहुत सारी तब्दीलियों की जरुरत हैं।

निजीकरण पर ज़ोर में कमी

इस संशोधन से लगता है कि पानी के निजीकरण के चौतरफा विरोध के बाद सरकार ने इस मामले में नरमी दिखाई है। पहले प्रारुप में तो जल संबंधी सेवाएँ पीपीपी मॉडल के तहत समुदाय या निजी क्षेत्र को दिए जाने का उल्लेख किया गया था। बिंदु क्रमांक 12.3 में जल संसाधन परियोजनाओं का प्रबंधन सामुदायिक सहभागिता से किए जाने की बात कहीं गई है। लेकिन दूसरी और राज्य सरकारों अथवा स्थानीय निकायों की मर्जी से निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किए जाने का प्रावधान भी किया गया है लेकिन इसमें समुदाय की राय का कोई उल्लेख नहीं है।

निजीकरण के प्रोत्साहन पर नरमी का सरकारी रुख और शर्तें पूरी नहीं करने पर निजी कंपनियों पर जुर्माने का प्रावधान स्वागतयोग्य है। जलक्षेत्र में निजीकरण अभी भी सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल है और इससे अनेक समस्याएँ खड़ी हुई है। कई निजीकरण अनुबंधों से स्पष्ट हुआ है कि अस्पष्ट प्रावधानों के माध्यम से निजी कंपनियों को बगैर किसी जवाबदेही के पानी से मुनाफा कमाने की छूट दी जाती है।

प्राथमिकताओं का पुनर्निर्धारण

नए प्रारुप में खाद्य सुरक्षा और गरीबों की आजीविका को जल उपयोग की उच्च प्राथमिकताओं में रखा गया है। जबकि, पहले प्रारुप में इन प्राथमिकताओं के लिए भी जल उपयोग आर्थिक वस्तु की तरह ही करने की बात कही गई थी। नए प्रारुप में पशुओं (संभवत: पालतू पशुओं के लिए) की जरुरत को भी मान्यता दी गई है, जो स्वागत योग्य है।

नदी जोड़ परियोजना

पहले प्रारुप में पानी के अंतर बेसिन स्थानांतरण को उत्पादन बढ़ाने के साथ-साथ सामाजिक न्याय, समानता के साथ बुनियादी जरुरतों से जोड़ कर न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया गया था। वास्तव में यह नदी जोड़ योजना का ही पर्यायवाची शब्द था, जिसका काफी विरोध हुआ था। अब प्रत्येक प्रकरण में 'सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय' प्रभावों के आंकलन के बाद निर्णय लिया जाने की बात कही गई है। साथ ही स्थानीय जल संसाधनों के उपयोग हेतु समुदाय को संवेदनशील बनाने पर भी बल दिया गया है।

पहले प्रारुप में साफ पेयजल को जीवन का अधिकार माना गया था लेकिन नए प्रारुप में भी पानी को मूलभूत मानवीय अधिकार के रुप में मान्यता नहीं दी गई है। इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर नया प्रारुप दो कदम पीछे हटा है।

राष्ट्रीय जल नीति 2012:पानी का अधिकार खतरे में

इस वर्ष की शुरुआत में भारत सरकार ने राष्ट्रीय जलनीति का खाका वेबसाईट पर पेश कर उस पर जनता से प्रतिक्रिया जाननी चाही थी। इस नीति पर देश में काफी बहस हुई और इसके संभावित परिणामों के संबंध में गंभीर चिंताए व्यक्त की गई।

देश की पहली जल नीति 1987 में बनाई गई थी। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा ढॉचागत समायोजन कार्यक्रम चलाया गया था जिसके तहत क्षेत्र सुधार यानी सेवाओं के निजीकरण पर बल दिया गया था। इस ढॉचागत समायोजन कार्यक्रम के तहत तीसरी दुनिया के देशों से अपना राजकोषीय घाटा कम करने की सलाह के साथ ही प्राकृतिक संसाधनों के संबंध में नीतियाँ बनाने की अपेक्षा की गई थी। इसके बाद कई भारत समेत कई देशों में पहली बार अपनी–अपनी राष्ट्रीय जल नीतियॉ बनाई गई। इस नीति को अप्रैल 2002 में उद्यतन कर नई राष्ट्रीय जलनीति जारी की गई थी जिसमें पहली बार जल संसाधनों के नियोजन, विकास और प्रबंधन में निजी क्षेत्र की भागीदारी का प्रावधान किया गया था।

वर्ष 2012 की राष्ट्रीय जल नीति के प्रारुप में पानी के निजीकरण की नीति को विस्तार दिया गया है। इस प्रारुप में निजीकरण के लिए 'सार्वजनिक निजी भागीदारी' या पीपीपी के जुमले का इस्तेमाल किया गया है यानी काम वही नाम नया। साथ ही जल क्षेत्र में सुधार (निजीकरण) को प्रोत्साहन और सहायता प्रदान किया जाना शामिल किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियों के एजेण्डे का अनुकरण करते हुए इस नीति में यह भी घोषणा कर दी गई है कि राज्य को 'सेवा प्रदाता' के बजाय नियामक और प्रबंधक की भूमिका निभानी चाहिए। हालांकि नीति में पानी को सामुदायिक संसाधन भी माना गया है लेकिन जोर तो इसे आर्थिक वस्तु मानने पर ही दिया गया है।

अब तक यही माना जाता रहा है कि कानून सबसे महत्वगपूर्ण तथा अंतिम होते हैं और इस बात का ध्यान रखा जाता रहा है कि नीतियॉ कानून की मूल भावना की विरोधाभाषी न हो। लेकिन अब जमाना बदल गया है। अब नौकरशाहों द्वारा बनाई जाने वाली नीतियॉ विधानमण्ड लों को निर्देशित करती है कि नीतियों के विरोधाभाषी कानून देश में नहीं चलेंगें। हमारे देश में मध्य प्रदेश सिंचाई अधिनियम 1931, उत्तरी भारत नहर एवं जलनिकास अधिनियम 1873 जैसे पानी से संबंधित सदियों पुराने कानून है जिनमें पानी पर राज्यन का एकाधिकार माना गया है। कुछ वर्षों पहले तक इन कानूनों को चुनौती देने वाली किसी नीति के बारे में सोचा तक नहीं गया था लेकिन, अब नीतियों के मुताबिक कानून बनाए जा रहे हैं या फिर मौजूदा कानूनों को बदला जा रहा है। सिंचाई प्रबंधन में कृषकों की भागीदारी अधिनियम 1999 ऐसा ही कानून है जो जल नीति के अनुरुप बनाया गया है। इस कानून में 2003 में संशोधन कर सिंचाई क्षेत्र में निजीकरण को शामिल किया गया। केवल इतना ही नहीं, अब अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय एजेंसियॉ स्वनयं सरकारों को निर्देशित करती है कि हमारे देश में कैसे कानून बनें। विश्वब बैंक ने मध्यरप्रदेश जलक्षेत्र पुनर्रचना परियोजना हेतु 39.6 करोड़ डॉलर का कर्ज देते समय यह शर्त रखी थी कि प्रदेश सरकार को श्जल नियामक कानूनश बनाना पड़ेगा। प्रदेश सरकार ने इस कानून के प्रति अनेक बार अपनी बचनबद्धता दर्शाई है। इसी प्रकार मध्याप्रदेश शहरी 20 करोड़ डॉलर के मध्यसप्रदेश शहरी जलापूर्ति एवं पर्यावरण सुधार कर्ज के लिए परियोजना शहरों में सार्वजनिक नल खत्मस करने, गरीबों को मुफ्त पानी बंद करने और जल दरें बढ़ाने की शर्त रखी थी। इस दिशा में भी सरकार को आगे बढ़ता हम देख रहे हैं।

1 अप्रैल 2002 को राष्ट्रीपय जल नीति जारी करते हुए तत्कीलीन प्रधानमंत्री अटलबिहारी वाजपेयी ने शानदार भाषण दिया था। उन्हों्ने इसे राष्ट्रीय स्तार पर जल संसाधन के नियोजित विकास और प्रबंधन के लिए बनाई गइ नीति बताते हुए जल के समुदाय आधारित प्रबंधन की बात कही थी। लेकिन, यह सहभागी प्रबंधन और कुछ नहीं बल्कि जल उपभोक्ता समूहों के गठन के माध्य म से सरकार का अपनी जिम्मेबदारी कम करने का प्रयास मात्र था। इसी नीति में परियोजनाएँ बनाने, मालिकी देने, संचालन करने, भाड़े पर देने और जल संसाधन के परिवहन में निजीकरण किए जाने का भी उल्लोख था। अपने भाषण के अंत में श्री वाजपेयी ने कहा था कि यह (जलनीति) एक नए युग की शुरुआत है। श्री वाजपेयी का यह वाक्य सच साबित हुआ और उस जलनीति के कारण अब एक नया युग आ चुका है जिसमें पीपीपी के नाम पर सरकारी धन से निजी कंपनियों को लम्बे समय तक मुनाफा कमाने की छूट दी जाने लगी है।

जल नीति 2012 के प्रारुप की प्रस्ताकवना में जल संकट का खतरा बताते इसके बेहतर प्रबंधन एवं संरक्षण हेतु निजीकरण की वकालत की गई है। समानता, सामाजिक न्याा‍य, स्थानयित्वव, पारिस्थितिक आवश्यषकता, जीवन का अधिकार, गरीबों की जीविका, खाद्य सुरक्षा, पेयजल की उपलब्ध ता सुनिश्चित करने जैसे जुमलों के उपयोग के बावजूद पानी को आर्थिक वस्तुन मानने पर ही जोर दिया गया है।

नीति में भारतीय भोगाधिकार अधिनियम (Indian Easement Act) 1882 में संशोधन की संभावना व्क्तीय की गई है ताकि किसानों द्वारा खुद की भूमि से पानी निकालने पर प्रतिबंध लगाया जा सके। पानी की कमी वाले क्षेत्रों में भूजल स्तैर सुधारने के नाम पर अंतरबेसिन अंतरण पर जोर दिया गया है लेकिन इसका फायदा राजनैतिक हैसियत वाले क्षेत्रों और निजी कंपनियों को ही मिलेगा।

जल दरों का निर्धारण परियोजनाओं के प्रशासन, संचालन और संधारण खर्च की पूर्ण लागत वसूली के सिद्धांत पर करने पर बल दिया गया है। लेकिन स्था नीय जलप्रबंधन की अनिवार्यता पर नीति मौन है। इसका प्रभाव यह होगा कि बड़े बजट की योजनाएँ बनाई जाएगी जिनका संचालन खर्च भी अधिक होगा और उसकी लागत न तो सिंचाई का पानी लेने वाले किसान चुका पाएँगें और न हीं पेयजल की दरकार रखने वाले आम नागरिक। इस तरह की बड़े बजट की योजनाएँ बनाने की परिपाटी शुरु हो चुकी है। खण्डववा में 52 किमी दूर इंदिरा सागर जलाशय से, शिवपुरी में 40 किमी दूर मड़ीखेड़ा बाँध से, पिपरिया में 18 किमी दूर साण्डिया स्थित नर्मदा से और भोपाल में 70 किमी दूर नर्मदा से पानी लाने की योजनाएँ है। इन सारी योजनाओं का संचालन पीपीपी के माध्य म से ही होना है। इसलिए, इनके संचालन–संधारण खर्च के साथ निजी कंपनी का मुनाफा भी आम आदमी से वसूला जाएगा।

जल के अधिक दोहन का कारण बिजली की सस्ती दरों को बताया गया है। इससे स्पष्ट है कि पानी के संरक्षण के नाम पर अब बिजली की दरों को और बढ़ाया जाएगा। किसानों के लिए सिंचाई और आम आदमी के लिए रोशनी मुश्किल होना तय है।

प्रदूषण रोकने के बजाय प्रदूषक पर जुर्माने की पैरवी की गई है। यह एक प्रकार से उद्योगपतियों को प्रदूषण करने की परोक्ष रुप से दी गई छूट है। क्योंकि उद्योगपति–राजनेता गठजोड़ के कारण उद्योगपतियों से जुर्माना वसूला जाना संभव नहीं होता है। दूरसंचार कंपनी रिलायंस को ग्रामीण क्षेत्र में सेवा न देने के कारण (लायसेंस की शर्तों में यह शामिल था) विभाग ने 650 करोड़ का जुर्माना लगाया था लेकिन विभाग मंत्री श्री कपिल सिब्बल ने जुर्माना घटाकर मात्र 5 करोड़ कर दिया था।

परियोजना प्रभावितों को दिए जाने वाले मुआवजे का कुछ हिस्सा लाभांवित परिवारों से वसूलने की बात कही गई है। लेकिन, सरकार इतनी हिम्मत दिखा पाए यह संभव नहीं है। मध्यप्रदेश में 1986 से एक कानून बना है जिसके अनुसार परियोजना प्रभावितों के पुनर्वास हेतु लाभांवित किसानों की जमीन का कुछ हिस्सा अर्जित करने का प्रावधान है। लेकिन इसे लागू नहीं किया जा सका है। सरकार का तर्क था कि इस कानू को लागू करने से लाभांवित परिवार ही परियोजना का विरोध करने लगेंगें।

शहरी जलप्रदाय व्यावस्था सतही जल से करने का करने को बेहतर बताया गया है। इसका प्रभाव यह होगा कि वर्तमान सतही जल संरचनाओं से ही जलप्रदाय योजनाएँ बनाने को न्या योचित ठहराया जाएगा तथा स्थातनीय संसाधनों की उपेक्षा की जाएगी। खेती के लिए बने जलाशयों का अन्यय कार्यों के लिए दोहन होने से समुदायों में विवाद बढ़ेंगें।

2002 की जल नीति में राज्यों से भी अपनी–अपनी जलनीतियॉ अगले 2 वर्षों में तैयार करने की अपेक्षा की गई थी। इसी के तहत 17 सितंबर 2003 को मध्ययप्रदेश ने अपनी जलनीति घोषित की। यह नीति भी योजनाओं की लागत वसूली और निजीकरण का समर्थन करने वाली ही है।

जल नीति का संशोधित प्रारुप

जून 2012 में जल संसाधन मंत्रालय की वेबसाईट पर संशोधित जल नीति का प्रारुप रखा गया है। इसमें कुछ बदलाव स्वा गतयोग्य हैं लेकिन फिर भी बहुत सारी तब्दीगलियों की जरुरत हैं।

निजीकरण पर जोर में कमी

इस संशोधन से लगता है कि पानी के निजीकरण के चौतरफा विरोध के बाद सरकार ने इस मामले में नरमी दिखाई है। पहले प्रारुप में तो जल संबंधी सेवाएँ पीपीपी मॉडल के तहत समुदाय या निजी क्षेत्र को दिए जाने का उल्ले।ख किया गया था। बिंदु क्रमांक 12.3 में जल संसाधन परियोजनाओं का प्रबंधन सामुदायिक सहभागिता से किए जाने की बात कहीं गई है। लेकिन दूसरी और राज्य सरकारों अथवा स्थानीय निकायों की मर्जी से निजी क्षेत्र को प्रोत्सोहित किए जाने का प्रावधान भी किया गया है लेकिन इसमें समुदाय की राय का कोई उल्लेख नहीं है।

निजीकरण के प्रोत्सा हन पर नरमी का सरकारी रुख और शर्तें पूरी नहीं करने पर निजी कंपनियों पर जुर्माने का प्रावधान स्वागतयोग्यी है। जलक्षेत्र में निजीकरण अभी भी सरकार की प्राथमिकताओं में शामिल है और इससे अनेक समस्याएँ खड़ी हुई है। कई निजीकरण अनुबंधों से स्प ष्टभ हुआ है कि अस्पष्ट प्रावधानों के माध्यसम से निजी कंपनियों को बगैर किसी जवाबदेही के पानी से मुनाफा कमाने की छूट दी जाती है।

प्राथमिकताओं का पुनर्निर्धारण

नए प्रारुप में खाद्य सुरक्षा और गरीबों की आजीविका को जल उपयोग की उच्चज प्राथमिकताओं में रखा गया है। जबकि, पहले प्रारुप में इन प्राथमिकताओं के लिए भी जल उपयोग आर्थिक वस्तुछ की तरह ही करने की बात कही गई थी। नए प्रारुप में पशुओं (संभवतः पालतू पशुओं के लिए) की जरुरत को भी मान्यता दी गई है, जो स्वाुगत योग्य है।

नदी जोड़ परियोजना

पहले प्रारुप में पानी के अंतरबेसिन स्थानांतरण को उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ सामाजिक न्याय, समानता के साथ बुनियादी जरुरतों से जोड़ कर न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया गया था। वास्त व में यह नदी जोड़ योजना का ही पर्यायवाची शब्दर था, जिसका काफी विरोध हुआ था। अब प्रत्येक प्रकरण में 'सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय' प्रभावों के आंकलन के बाद निर्णय लिया जाने की बात कही गई है। साथ ही स्थाननीय जल संसाधनों के उपयोग हेतु समुदाय को संवेदनशील बनाने पर भी बल दिया गया है।

पहले प्रारुप में साफ पेयजल को जीवन का अधिकार माना गया था लेकिन नए प्रारुप में भी पानी को मूलभूत मानवीय अधिकार के रुप में मान्यिता नहीं दी गई है। इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर नया प्रारुप दो कदम पीछे हटा है।